निजी सम्बन्ध बनाने की कला

अगले सात पाठों में अगुआई के काम पर विचार किया गया है जिनमें अगुओं के लिए आवश्यक कला अर्थात निजी सम्बन्ध बनाने की कला, बातचीत करने की कला, परामर्श देने तथा संगठनात्मक कला शामिल हैं।

इन पाठों का आधार यह है कि कलीसिया के किसी अगुवे में उस भूमिका को निभाने की जिसके लिए उसे चुना जाता है योग्यता होने के बावजूद उसे परमेश्वर की इच्छा के अनुसार अपनी भूमिका निभाने में सहायता के लिए सुधार या उस कला को निखारने की आवश्यकता रहती है। कोई कह सकता है, ''यदि आपका जीवन ऐसा है जैसा परमेश्वर चाहता है जैसा कि आपको होना चाहिए, तो आपको किसी कला को सीखने की चिंता करने की आवश्यकता नहीं होगी। आप वही करेंगे जो स्वाभाविक रूप से करना जरूरी होगा, और जो कुछ भी आप करेंगे उसका अंत अच्छा ही होगा। आखिर, जब कोई आदमी चरवाहा बन जाता है, तो वह भेड़ों के आगे चलकर उनकी सहायता करके और किसी भेड़ के खो जाने पर उसे ढूढ़कर उससे प्रेम करके उसकी अगुआई करता है।'' ज़्या ऐसा करने के लिए ''सीखा'' जा सकता है? फिर कला सीखने का अध्ययन करने की ज़्या आवश्यकता है?

निजी सम्बन्ध बनाने की कला को विकसित करने की आवश्यकता

कलीसिया में लीडरशिप की प्रकृति

सबसे पहले कलीसिया के अगुओं को निराले ढंग से लोगों की अगुआई करने के कारण निजी सम्बन्ध बनाने की कला विकसित करने की आवश्यकता है। यदि कलीसिया के अगुवे किसी बॉस, सैनिक, कोच या माता – पिता की तरह अगुआई कर सकते तो वे कह सकते थे कि उन्हें अगुआई करने की कला सीखने की कोई ज़रूरत नहीं है।[1] वे कह सकते थे, ''मैं उन्हें बता देता हूं कि उन्हें ज़्या करना है और वे वैसे ही करते हैं।'' बॉस, सैनिक, या कोच या माता – पिता ऐसी बात कहें तो ठीक लगता है, लेकिन कलीसिया के अगुवों के लिए यह ढंग सही नहीं है। दूसरे क्षेत्रों में अगुआई करने वाले नेता अपनी बात मनवाकर किसी को पुरस्कार और किसी को दण्ड दे सकते हैं लेकिन कलीसिया के अगुओं

को ऐसा अधिकार नहीं है।

मान लो कि कलीसिया के प्रत्येक सदस्य को कलीसिया की ओर से वेतन मिलता है और ऐल्डर ही यह फैसला करते हैं कि किसे कितना वेतन देना है और किसे जारी रखना है या किसका वेतन बन्द करना है तो ऐल्डर सदस्यों से कह सकते थे, ''यदि आप बीमारों को देखने और आराधना में न आने वाले सदस्यों को देखने नहीं जाते, तो आपको वेतन नहीं मिलेगा।'' ऐल्डरों को सदस्यों से मिलने वाले सम्मान की या उनसे किसी प्रकार की सहायता मांगने की कोई चिंता नहीं होनी थी। वे हर काम सदस्यों से करवाते और इन्कार करने वालों से उनसे ज़बर्दस्ती करते, परन्तु कलीसिया ऐसे काम *नहीं* करती है! यदि ऐल्डर चाहते हैं कि सदस्य कलीसिया के काम में और सक्रियता से भाग लें, तो उन्हें सदस्यों को उस काम को करने के लिए तैयार करना होगा। इसके लिए लीडरशिप या नेतृत्व करने की कला की आवश्यकता है।

ज़्या बाइबल के अनुसार योग्यताओं की शर्तें पूरी करने पर ऐल्डर चुने जाने के कारण उनमें यह कला अपने आप ही आ जाती है? ज़रूरी नहीं है। ऐल्डर होने की योग्यता कला नहीं बल्कि एक गुण ही है। नियुक्ति से पहले ऐल्डर को बताया जाता है कि ऐल्डर चुने जाने के लिए उसमें ज़्या – ज़्या गुण होने आवश्यक हैं। इसमें इस सद्भावना को नकारा नहीं जाता कि नेतृत्व करने की अपनी कला में सुधार लाकर वह और अच्छे ढंग से कलीसिया की अगुआई करेगा। जिस तरह प्रचारकों के लिए अपने आप में सुधार करना आवश्यक है वैसे ही ऐल्डरों के लिए और प्रभावशाली होने के ढंग खोजते रहना आवश्यक है।

नये नियम की शिक्षा

दूसरी बात, कलीसिया के अगुओं के लिए अगुआई करने की कला विकसित करते रहना आवश्यक है ज़्योंकि आत्मिक उद्देश्यों को पूरा करने के लिए अच्छे से अच्छा ढंग ढूंढ़ना पवित्र शास्त्र के अनुसार ही है। नये नियम की कई आयतें इस सिद्धांत की ओर ध्यान दिलाती हैं।

अगुओं के लिए ''सांपों की नाईं बुद्धिमान'' होना आवश्यक है। यीशु ने सीमित आज्ञा (लिमिटेड कमीशन) देकर बारह चेलों को भेजते हुए, उनसे कहा था, ''देखो, मैं तुम्हें भेड़ों की नाईं भेड़ियों के बीच में भेजता हूं, सो सांपों की नाईं बुद्धिमान और कबूतरों की नाई भोले बनो'' (मत्ती 10:16)। ''सांपों की नाईं बुद्धिमान'' होने का अर्थ है कि परमेश्वर की प्रेरणा प्राप्त होने के बावजूद उन बारह चेलों को (मत्ती 10:19, 20), वचन सुनाते समय जहां तक सम्भव हो सताव से बचने का निर्णय समझदारी से करना था (मत्ती 10:11–14)। उस तथ्य के साथ यह जोड़ लिया जाए कि परमेश्वर ने अपनी कलीसिया के लिए ''ऐल्डरों'' अर्थात परिभाषा के अनुसार बज़ुर्गों और बुद्धिमानों की अगुआई में चलना चुना। बुद्धिमता से काम करने का अर्थ होशियारी से काम करना है।

अगुओं के लिए ''चतुर'' होना सीखना आवश्यक है। अधर्मी भण्डारी के दृष्टांत में (लूका 16:1–9), यीशु ने एक ऐसे प्रबन्धक की तस्वीर दिखाई जिसने अपने स्वामी की

सज़्पज़ि का दुरुपयोग किया था और उससे दण्ड दिए जाने के पूर्वाभास के रूप में हिसाब देने के लिए कहा गया था। उस अधर्मी भण्डारी ने अपनी छंटनी हो जाने के बाद अपने लिए दूसरी जगह तैयार करने के लिए अपने पद का दुरुपयोग किया था। यीशु ने इस दृष्टांत को इन शज़्दों के साथ समाप्त किया:

> ... ज़्योंकि इस संसार के लोग अपने समय के लोगों के साथ रीति व्यवहारों में ज्योति के लोगों से अधिक चतुर हैं। और मैं तुम से कहता हूं, कि अधर्म के धन से अपने लिए मित्र बना लो; ताकि जब वह जाता रहे, तो वे तुज़्हें अनन्त निवासों में ले लें (लूका 16:8, 9)।

इस दृष्टांत के द्वारा यीशु ने यह सिखाना चाहा था कि मसीही लोगों को ''चतुराई'' या बुद्धिमज़ा से अपने संसाधनों का इस्तेमाल करना सीखना चाहिए। इस बेईमान प्रबन्धक ने तो अपनी चतुराई का इस्तेमाल अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किया, लेकिन मसीही व्यज़्ति का उद्देश्य लोगों का उद्धार करना होना चाहिए। इसके अलावा, यीशु बुद्धिमान होने की आवश्यकता और संसाधनों का इस्तेमाल होशियारी से करने की बात सिखा रहा था।

अगुओं को चाहिए कि अच्छी लगने वाली और मन को छू लेने वाली बातें करें। कलीसिया के अगुओं को सही बात सही समय पर सही ढंग से करनी चाहिए:

> *तुज़्हारा वचन सदा अनुग्रह सहित और सलोना हो,* कि तुज़्हें हर मनुष्य को उचित रीति से उज़र देना आ जाए (कुलुस्सियों 4:6)।

> मसीह को प्रभु जानकर अपने - अपने मन में पवित्र समझो, और जो कोई तुमसे तुज़्हारी आशा के विषय में कुछ पूछे, तो उसे उज़र देने के लिए सर्वदा तैयार रहो, पर *नम्रता और भय के साथ* (1 पतरस 3:15)।

> और प्रभु के दास को झगड़ालू नहीं होना चाहिए, पर सब के साथ कोमल और शिक्षा में निपुण, और सहनशील हो। और *विरोधियों को नम्रता से समझाए, ...* (2 तीमुथियुस 2:24, 25)।

> *बरन प्रेम में सच्चाई से चलते हुए,* सब बातों में उस में जो सिर है, अर्थात मसीह में बढ़ते जाएं (इफिसियों 4:15)।

केवल उसी पर विचार करना आवश्यक नहीं है कि अगुवे ज़्या कहते हैं आवश्यक यह भी है कि *वे इसे कैसे कहते हैं!* सही बात, स्पष्ट ढंग से, दूसरों के मानने योग्य और प्रेम से कहना ही भला है।

अगुओं को हर सज़्ज़व ढंग का इस्तेमाल करना चाहिए। 1 कुरिन्थियों 9:19-23 में

पौलुस ने कहा कि उसने हर ढंग का इस्तेमाल प्रभावशाली ढंग से किया:

> मैं यहूदियों के लिए यहूदी बना कि यहूदियों को खींच लाऊं, जो लोग व्यवस्था के आधीन हैं उन के लिए मैं व्यवस्था के आधीन न होने पर भी व्यवस्था के आधीन बना, कि उन्हें जो व्यवस्था के आधीन हैं, खींच लाऊं। व्यवस्थाहीनों के लिए मैं (जो परमेश्वर की व्यवस्था से हीन नहीं, परन्तु मसीह की व्यवस्था के आधीन हूं) व्यवस्थाहीन सा बना, कि व्यवस्थाहीनों को खींच लाऊं। मैं निर्बलों के लिए निर्बल सा बना, कि निर्बलों को खींच लाऊं, मैं सब मनुष्यों के लिए सब कुछ बना हूं, कि किसी न किसी रीति से कई एक का उद्धार कराऊं (1 कुरिन्थियों 9:20-22)।

पौलुस ने यदि ''हर ढंग'' का इस्तेमाल किया, तो आज कलीसिया के अगुओं को भी वैसे ही करना चाहिए।

अगुओं को चौकसी से बनाना चाहिए। 1 कुरिन्थियों 3:5-15 में पौलुस ने समझाया कि जो लोग पौलुस और अप्पुलोस जैसे हैं, वे बनाने वाले अर्थात मिस्त्री ही हैं (आयतें 9, 10)। ज़्योंकि मसीह नींव है इसलिए कलीसिया के अगुओं के पास किसी दूसरी नींव पर रद्दा रखने का कोई विकल्प नहीं है (आयतें 10, 11)। कलीसिया के अगुवे उस नींव पर या तो (1) सोना, चांदी, बहुमूल्य पत्थर या फिर (2) काठ, घास, फूस का ''रद्दा'' ही रख सकते हैं (आयत 12)। कुछ हद तक मिस्त्री ही तय करता है कि उस नींव पर किस तरह का रद्दा रखना है। पौलुस कहता है कि हर मिस्त्री और हर रद्दे को परखने का दिन आएगा, जब मिस्त्री का काम आग से परखा जाएगा (आयत 13)। काठ, घास और फूस आग से जल जाएगी; जबकि सोना, चांदी और बहुमूल्य पत्थर बचे रहेंगे। पौलुस द्वारा वर्णित परख का यह दिन तनाव, सताव और परीक्षा का समय है। हर मण्डली पर परख का ऐसा समय अवश्य आता है।

यदि मिस्त्री का काम स्थिर बना रहता है, तो उसे पुरस्कार दिया जाएगा (आयत 14)। परिश्रम करने वाले को इस जीवन में इससे बड़ा पुरस्कार नहीं मिल सकता कि उसे यह पता चल जाए कि उसका काम व्यर्थ नहीं है अर्थात जिस कलीसिया को बनाने के लिए उसने काम किया वह जीवित है और फल फूल रही है! यदि काम स्थिर नहीं रहता है, तो बनाने वाले को तो हानि होगी लेकिन वह स्वयं बच जाएगा (आयत 15)। हानि अर्थात उदासी के अहसास की कल्पना करें जो इस ज्ञान से आता है कि जिस कलीसिया को बनाने के लिए उसने सहायता की थी वह कठिन दौर में स्थिर नहीं रह सकी और अब बिल्कुल खत्म हो गई है! यदि बनाने वाले ने परमेश्वर की इच्छा को पूरा करना चाहा और उसने अपनी पूरी कोशिश की है, तो उसका नाश नहीं होगा; उसका उद्धार उसके द्वारा मसीही बनने वालों के विश्वासी रहने या उन स्थापित मण्डलियों के बने रहने पर निर्भर नहीं है।

फिर, बनाने वाले अर्थात कलीसिया के अगुवे को ज़्या करना चाहिए? ''हर एक मनुष्य चौकस रहे, कि वह उस पर कैसा रद्दा रखता है'' (आयत 10)। चौकसी से रद्दा रखने

की चुनौती होशियारी से काम करने के लिए है! कलीसिया के अगुओं को अगुआई से जुड़ी कला सीखने की आवश्यकता है।

कौशल बढ़ाना

कलीसिया के अगुओं को दूसरों के साथ मिलकर आगे बढ़ना सीखना चाहिए। यदि वे उस ''पद'' के योग्य भी हैं जो उनके पास है, तो भी उन्हें अपने काम को प्रज़ावशाली ढंग से करने के लिए ''लोगों के काम करने की कला'' सीखनी आवश्यक है। कलीसिया में बार-बार समस्याएं, लोगों के सही या गलत व्यवहार के कारण नहीं बल्कि उनके मतभेदों के कारण ही पैदा होती हैं। इसके अलावा, हो सकता है कि कोई व्यज़्ति वचन में बने रहने वाला और शिक्षा के विषय में बड़ा जागरूक होने के बावजूद लोगों से सज़्बन्ध बनाने के गुण के अभाव के कारण अच्छा अगुवा न हो।

कलीसिया का अगुआ अच्छे निजी सज़्बन्ध की कला कैसे विकसित कर सकता है?

सब लोगों में दिलचस्पी लेकर

कलीसिया के अगुओं का काम ''लोगों'' के साथ है। उन्हें कलीसिया के अन्दर और बाहर दूसरे लोगों में गहरी दिलचस्पी लेनी चाहिए, जैसा कि इस लेख से पता चलता है:

> ''जब तक आप किसी की परवाह नहीं करते तब तक किसी को इस बात से कोई सरोकार नहीं होता कि आप कितना जानते हैं या आपका कितना ज्ञान है।'' ... हम अज़्सर ज्ञान में बड़े और करुणा करने में छोटे, शिक्षा में सही और स्वभाव से ठोकर खिलाने वाले होते हैं! यदि हम इतना याद रखें कि यीशु गाड़ियां खरीदने, बजट बनाने और भवनों के निर्माण के लिए, कालीन खरीदने, और कमेटियां बनाने के लिए नहीं मरा तो हम अच्छा कहेंगे। वह तो लोगों के लिए मरा!
>
> लोगों के साथ काम करते हुए सामान्य ज्ञान के कुछ ये नियम हैं:
>
> 1. लोगों से बात करें! मुस्कराकर किसी का अभिवादन करने से बढ़कर कोई बात नहीं है!
>
> 2. उनकी ओर देखकर मुस्कराएं! मुस्कराहट एक अन्तरराष्ट्रीय भाषा है। त्योरी या भौंहें चढ़ाने के लिए 72 मांसपेशियों की आवश्यकता होती है, लेकिन मुस्कराने के लिए केवल 14 की। और इसका लाभांश मिलता ही रहता है।
>
> 3. लोगों को नाम लेकर बुलाएं! ''मित्रों का नाम बुलाकर नमस्कार करें'' (3 यूहन्ना 15)।
>
> 4. मित्रतापूर्वक व सहायता करने वाले बनें! मित्र बनाने का सबसे अच्छा ढंग अच्छे मित्र बनना है। यीशु ''पापियों का मित्र'' था (लूका 7:34)।
>
> 5. अपने प्रेम पर सूत्र न डालें! ''मैं तुमसे प्रेम करूंगा यदि ...'' इसमें से कोई नहीं,यीशु ने [व्यज़्ति के पाप तथा निर्बलताओं] के ''बावजूद'' उससे इसलिए

प्रेम किया ''ज़्योंकि'' [हर मनुष्य को परमेश्वर के स्वरूप पर बनाया गया है और परमेश्वर उससे प्रेम करता है]।

6. लोगों में सचमुच दिलचस्पी लें! यदि आप यह ध्यान रखते हैं कि लोग सचमुच महत्वपूर्ण हैं तो आप उनके साथ आसानी से पेश आ सकते हैं!

7. प्रशंसा करते हुए दयालु बनें! आप ''प्रशंसा करके लोगों को महान बना'' सकते हैं। ...

8. दूसरों की भावनाओं के प्रति संवेदनशील रहें। यहां सुनहरा नियम लागू होता है: ''जो कुछ तुम चाहते हो, कि मनुष्य तुज़्हारे साथ करें, तुम भी उनके साथ वैसा ही करो।''

9. दूसरों के विचारों को महत्व दें! विवाद के तीन पक्ष हो सकते हैं – आपका, दूसरे का और सही पक्ष!

10. सेवा करने को तैयार रहें! ''सेवक,'' ''दानी'' ही तो हैं जो ''महान'' कहलाएंगे (मज़ी 20:26)। ...

शिक्षा के विषय में सही होने, संगठन के विषय में दृढ़ होने और सेवकाई में समृद्ध होने के अपने प्रयास में, हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हम ''लोगों'' के साथ काम करते हैं जो संसार की सबसे मूल्यवान वस्तु है। *सज़्भालकर पकड़ें ... प्रार्थना करते हुए पकड़ें।*[2]

हो सकता है कि कलीसिया के अगुवे बजट और आंकड़ों में इतनी दिलचस्पी लेते हों कि उस बजट और आंकड़ों में दिखाए गए लोगों को भूल ही जाएं। कलीसिया के अगुवे वास्तव में ''लोगों के लिए काम'' करते हैं।

अपने आप को सुधारना

सज़्भवतः, कलीसिया के अगुओं का सबसे बड़ा शत्रु दूसरों के साथ अपने आपको जोड़ने का प्रयास है। लोगों को यही लगता है, ''मैं भाई जोन्स के साथ इस शर्त पर चलने को तैयार हूं कि वह अपने आपको बदल ले।'' अगुओं को यह समझने की आवश्यकता है कि यदि वे भाई जोन्स के साथ चलना चाहते हों, या कोई और चलना चाहता है, तो वे केवल अपने आपको बदलकर ही उनके साथ चल सकते हैं। आवश्यक परिवर्तन करने के लिए अगुओं को दो बातें करनी ज़रूरी हैं:

(1) *उन्हें ''अपनी पहचान बनाने'' का निश्चय कर लेना चाहिए।* एक दूसरे की नकल नहीं करनी चाहिए। अंगुलियों के निशानों की तरह अगुवे अपने आप में सबसे अलग हैं। वह बनने का प्रयास करना जो वे नहीं हैं उन्हें स्पष्ट होने से रोकेगा (उदाहरण के लिए, किसी अन्तर्मुखी व्यज़्ति के लिए बहिर्मुखी बनने का प्रयास करना)। नये नियम के समयों में, पौलुस, पतरस, बरनबास, अन्द्रियास और थोमा सब में एक दूसरे से अलग गुण थे। परन्तु वे सभी परमेश्वर को भाते थे। अगुओं को यह सोचने की आवश्यकता नहीं है कि आज उन्हें परमेश्वर को भाने के लिए एक जैसा ही लगना चाहिए।

(2) उन्हें ''अपनी पूरी कोशिश करनी'' चाहिए। व्यक्तित्व की सीमाओं में रहते हुए, ''मसीह के पूरे डील डौल तक'' बढ़ने तक पहुंचने की खोज में सुधार की गुंजाइश रहती ही है (इफिसियों 4:13)। सुधार का सबसे अच्छा तरीका अपने में मसीही विशेषताओं को बढ़ाना है। यदि किसी अगुवे में 1 कुरिन्थियों 13:4-7, गलतियों 5:22, 23 या 2 पतरस 1:5-7 में बताई गई विशेषताएं आ जाती हैं, तो दूसरे उसका अनुसरण आसानी से कर सकते हैं। कई बार जिसे व्यक्तित्व माना जाता है वह चरित्र बिगाड़ने वाला साबित होता है। उदाहरण के लिए, यदि कोई कहता है, ''दूसरों को नमस्कार करना या उनका हाल - चाल पूछना या उनकी समस्याओं को सुनना मेरी शान के खिलाफ़ है,'' तो शायद यह समस्या व्यक्तित्व की उतनी नहीं जितनी किसी की सज़्भाल या उससे प्रेम करने की अनिच्छा की है।

दूसरों के साथ मेल रखना

किसी ने कहा है, ''चरवाहे की एक विशेषता यह है कि वह भेड़ों के साथ रहता है; वह उनके साथ ही रहता है चाहे उसमें से भी उनके जैसी गंध न आने लगे।'' कलीसिया के अगुओं के लिए उनके साथ जिनकी वे अगुआई करते हैं, समय बिताना आवश्यक है। भेड़ों में रहे बिना परमेश्वर के झुंड का चरवाहा बनने की कल्पना करना कठिन होगा। यदि कलीसिया का कोई अगुआ लगातार सदस्यों के साथ रहता है, तो इसके दो परिणाम होंगे:

पहला, वह मण्डली को अच्छी तरह से जान पाएगा। यदि कोई अगुआ मण्डली को जानने के लिए उसके सदस्यों के साथ नहीं रहता है तो उसके लिए उनकी अगुआई करना कठिन होगा। कहा जा सकता है कि यदि कोई अगुआ उनके साथ उन्हें नाम से जानने और उनके निजी इतिहास को और उनकी समस्याओं के बारे में जानने के लिए उनके साथ नहीं रहता तो उसे उनकी अगुआई करने का कोई अधिकार नहीं है।

दूसरा, और शायद सबसे महत्वपूर्ण, वे उसके बारे में जान पाएंगे। भेड़ें अपनी इच्छा से केवल चरवाहे के पीछे तभी चलेंगी यदि वे उसे अच्छी तरह जानती हों। इसलिए अगुओं को अपने बारे में दूसरों को बताने में हिचकिचाहट नहीं करनी चाहिए। हो सकता है कि कलीसिया के अगुवे ऐसा करने से हिचकिचाएं। वे जानते हैं कि उन्हें अपना नमूना देकर अगुआई करनी होगी। उन्हें यह भी पता है कि वे सिद्ध नहीं हैं। उन्हें अज़्सर यह भय रहता है कि यदि दूसरों को उनकी गलतियों का पता लग गया, तो मण्डली उन्हें कपटी कहकर तुच्छ मानेगी और उनकी विश्वसनीयता कम होगी, और सदस्य उनकी बात मानने से इन्कार कर देंगे। फिर भी, दूसरों को ''आपकी वास्तविक स्थिति'' जानने देने का जोखिम उठाने में ही भलाई है। कलीसिया के सदस्य ऐसे अगुओं की सराहना करते हैं जो दूसरों को अपने बारे में जानने का अवसर देते हैं।

दिखाना कि आप दूसरों की सज़्भाल व परवाह करते हैं

''मानवीय सज़्बन्धों के नियमों'' की बहुत सी मूल्यवान पुस्तकें हो सकती हैं परन्तु निजी सज़्बन्धों के बारे में ''नियमों की पुस्तक'' सबसे अच्छी बाइबल ही है। अगुवे यदि

प्रेम करने वाले, दयालु व नि:स्वार्थ सेवक हैं, तो वे दूसरों को साथ लेकर चलेंगे। फिर भी शायद सबसे महत्वपूर्ण सलाह यह ''*दिखाना* है कि आप परवाह करते हैं।'' कलीसिया के अगुवे अपने झुंड से प्रेम करते हैं, लेकिन कई बार वे अपने प्रेम को कभी व्यज़्त नहीं करते या दिखाते नहीं हैं। प्रेम को जब तक दिखाया नहीं जाता, तब तक न तो इसे माना जाता है और न ही इसका पता चलता है! *एज़्शन* पत्रिका से ''द हाअथौर्न इफेज़्ट'' नामक लेख से निज़्नलिखित उदाहरण लिया गया था:

> एक बड़ी फैज़्टरी के एक विभाग से छह महिलाओं को अलग - अलग परिस्थितियों में काम करने के लिए परीक्षा लेने के लिए चुना गया। उनके कार्य की परिस्थितियों में हर बार दस विशेष परिवर्तन किए गए। कंपनी को यह जानकर आश्चर्य हुआ कि नई विधि अपनाने के बावजूद, चाहे यह पिछली स्थिति की ओर ही था, हर परिवर्तन के साथ उनके कार्य में सुधार हुआ।
>
> ऐसी परिस्थिति ऐसे कैसे काम कर पाई? यह पाया गया कि इसके चार अच्छे कारण थे: (1) उन्हें यह अहसास कराया गया था कि उनका कुछ विशेष महत्व है। (2) उनके साथ विशेष रूप से अच्छा व्यवहार किया गया था। (3) उन पर अधिक ध्यान दिया गया था। (4) उन्हें पता था कि जो परिवर्तन किए जा रहे थे वे उनकी भलाई के लिए ही थे।

अन्य शज़्दों में, जब लोगों को लगता है कि उनका ''कुछ महत्व'' है और उनके साथ ''अच्छा व्यवहार किया जाता'' है और विशेषकर जब बहुत ध्यान रखा जाता है और उन्हें लगता है कि उनके अगुवे छोटे - छोटे या निष्क्रिय परिवर्तनों में भी दिलचस्पी लेते हैं, तो उनको उस कार्य को जो उन्हें मिला है परिश्रम से करने के लिए प्रोत्साहन मिलेगा! यह सबक व्यवहार, स्कूल, पति - पत्नी, माता - पिता और कलीसिया सब के लिए है!

ज़्या ''मित्र बनाने और लोगों को प्रभावित करने'' के लिए डेल कारनेजी तथा अन्यों द्वारा दिए गए परामर्श में कोई अन्तर है? *अन्तर तो उद्देश्य में है: कलीसिया के अगुवे लोगों से सही व्यवहार करते हैं ज़्योंकि ऐसा करना उचित है, इसलिए नहीं कि वे उन पर अधिकार करना चाहते हैं, न इसलिए कि वे उनका लाभ उठाना चाहते हैं।* अगुआई करने वाले का लक्ष्य अपनी नहीं बल्कि दूसरों की भलाई करना है। मसीही लोग दूसरों का भला इसलिए करते हैं ताकि वे यीशु के उदाहरण का अनुसरण कर सकें (प्रेरितों 10:38), उनका उद्धार हो सके, प्रभु का कार्य प्रफुल्लित होकर कलीसिया बढ़े। मसीही लोग ऐसा अपना नाम कमाने के लिए या किसी का लाभ उठाने के लिए *नहीं* करते हैं!

दूसरों के साथ चलना सीखना

कलीसिया में लीडरशिप या अगुआई करने की अधिकतर समस्याएं ''व्यज़्तित्व की समस्याओं'' से जुड़ी होती हैं जिनका शिक्षा से कोई सज़्बन्ध नहीं होता है। लोग तो अलग - अलग विचारों के होते ही हैं! उनका अलग व्यज़्तित्व होता है, वे अलग सामाजिक -

आर्थिक वर्ग से आए होते हैं, अलग – अलग उम्र के होते हैं, अलग – अलग पारिवारिक पृष्ठभूमि से होते हैं और पवित्र शास्त्र को समझने का उनका दृष्टिकोण भी अलग होता है।

कुछ हद तक, परमेश्वर ने अपने वचन में अगुओं तथा कलीसिया के सदस्यों के बीच की सांस्कृतिक भिन्नताओं की समस्या के समाधान का ध्यान रखा है। उसने समझाया है कि सेवा करने वाले लोग कैसे होने चाहिए और उन्हें सेवा कैसे करनी चाहिए। सेवक बनकर सेवा करने वाले अगुओं के रूप में काम करने वाले गुण वाले उचित रूप से कार्य करने वाले ऐल्डरों में सामाजिक भिन्नताओं के कारण उपजी कई समस्याएं पैदा होने से पहले ही खत्म हो सकती हैं। परमेश्वर ने यह भी बताया है कि अगुवे (ऐल्डर) मण्डली के सदस्यों में से ही चुने जाएं। ये लोग मण्डली के मोहल्ले से ही होने चाहिए। इसलिए अगुओं व सदस्यों के बीच की मतभेद की सद्भावना कम हो जाती है।

अभी भी मतभेदों के कारण कई समस्याएं पैदा हो सकती हैं अर्थात हो सकता है कि कोई अगुआ सदस्यों के एक महत्वपूर्ण भाग के साथ सामाजिक रूप में ''बाहर'' हो जाए कि अगुआई करने वाला बहुत पढ़ा – लिखा हो, तथा अनुयायी अंगूठा छाप हों अर्थात वह ''नगर'' हो और वे ''गांव''; वह ''उज़र'' हो और वे ''दक्षिण''; वह ''औद्योगिक'' हो और वे ''किसान।'' इसके अलावा हो सकता है कि अगुवे से अगुवे का या अगुओं से सदस्यों का व्यक्तित्व अलग – अलग हो। कुछ लोग आशावादी होते हैं जबकि कुछ निराशावादी; कुछ ''बचत करने वाले'' और कई ''फ़िज़ूल.खर्ची करने वाले'' तथा कुछ लोग अन्तर्मुखी होते हैं और कुछ बहिर्मुखी; कुछ अपने मन से चलते हैं और कई किसी के चलाए चलते हैं; कुछ में सामाजिक और व्यक्तित्व की भिन्नता ऐसी होती है जिसमें कोई अन्तर नहीं लग सकता, परन्तु कलीसिया में पैदा होने वाली समस्याओं की जड़ अक्सर वही होती है।

कलीसिया का अगुआ ऐसी समस्याओं से कैसे निपट सकता है? परमेश्वर की बात मानने वाला अगुआ विश्वास से जुड़ी बातों में हार नहीं मानेगा। परन्तु किसी काम में विघ्न पड़ने से रोकने के लिए यदि ऐसा करके शांति बनी रहती है और कलीसिया बढ़ती है तो वह हार मानने के लिए और समझौता करने के लिए तैयार भी हो जाएगा। वह उन लोगों को साथ लेने की भी कोशिश करेगा जिनमें वह रहता और काम करता है। पौलुस की तरह, वह ''सब मनुष्यों के लिए सब कुछ'' बनने की कोशिश करेगा, ताकि ''किसी न किसी रीति से कई एक का उद्धार'' कराए (1 कुरिन्थियों 9:22)। वह मसीह के नमूने को ध्यान में रखेगा, जो स्वर्ग छोड़कर उन लोगों के साथ पृथ्वी पर आकर उनके जैसा ही बन गया हो जिनका वह उद्धार करना चाहता था:

> उस को चाहिए था, कि सब बातों में अपने भाइयों के समान बने; जिससे वह ... एक दयालु और विश्वासयोग्य महायाजक बने ... क्योंकि जब उसने परीक्षा की दशा में दुख उठाया, तो वह उनकी भी सहायता कर सकता है जिनकी परीक्षा होती है (इब्रानियों 2:17, 18; 4:15 भी देखिए)।

हो सकता है कि कलीसिया का अगुआ अपने और दूसरों के बीच के पाट को पूरी तरह

से दूर न कर पाए, लेकिन जितना वह इस काम में सफल होगा उतना ही प्रभावशाली ढंग से वह उनकी अगुआई कर पाएगा। इसके विपरीत, यदि वह अपने ही दृष्टिकोण से देखता है, तो वह उन लोगों की जो पहले ही उससे अलग हैं, अगुआई नहीं कर पाएगा।

निष्कर्ष

एक सार्वजनिक वज़्ता लोगों को खास करके इसलिए प्रभावित कर सकता है ज़्योंकि उसे उस बात का अनुभव होता है। किसी को समझा पाने के इस तत्व को ''नैतिक दृढ़विश्वास'' कहा जाता है। पुराने समय के साहित्यशास्त्री वज़्ता के अच्छे चरित्र वाला व्यज़्ति होने की आवश्यकता को समझते थे। ज़्युंटिलियन ने वज़्ता की परिभाषा ''बोलने में निपुण एक भला व्यज़्ति'' के रूप में की थी।[3] परन्तु वज़्ता के लिए ''भला मनुष्य'' होना *मानना* भी आवश्यक है। कई बार कलीसिया के अगुओं का चरित्र अच्छा होता है, परन्तु व्यज़्तित्व के आचरण के कारण दूसरे लोगों को यह तथ्य समझना असज़्भव होता है। ज़्योंकि मुज़्यत: वे उदाहरण, शिक्षा और समझाकर ही लोगों की अगुआई करते हैं, इसलिए जहां तक सज़्भव हो ऐसी आचरण की बातों को पीछे छोड़कर निजी सज़्बन्ध बनाने की कला सीखनी आवश्यक है जिससे उनके लिए न केवल भले लोग बनना बल्कि ऐसे *भले लोग होना माना* जाना सज़्भव हो सकता है कि लोग उनके पीछे चल सकें।

पाद टिप्पणियां

[1]''सेवक बनकर अगुआई करना'' अन्य क्षेत्रों अर्थात दज़्तर में या घर में भी प्रभावित हो सकते हैं। [2]मेरविन फिलिप्स, ''रिमैंबर दैट यू आर इन 'द पीपल बिज़नेस' '' *द चैलेंजर,* सैवन्थ एण्ड पॉपुलर चर्च ऑफ़ क्राइस्ट, मुर्रे, कैन्ट. (16 फरवरी 1983)। [3]लियु सैरेट एण्ड विलियम ट्रफेंट फोस्टर, *बेसिक प्रिंसिपल्स ऑफ़ स्पीच,* संशो. संस्क. (बोस्टिन: हयुफटन मिफलिन कं., 1946), 26.